The International Journal of Advanced Research in Multidisciplinary Sciences
(IJARMS)
Volume 3 Issue 2, 2020

''पंचाल संस्कृति के विविध आयाम"

रामप्रवेश कुमार,
शोध छात्र
विश्वविद्यालय, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर – 812007

मौर्य साम्राज्य के विध्वंस होने के पश्चात् इसके खण्हरों से कई नए साम्राज्य उभरें जिसमें उभरने वाला एक साम्राज्य पंचाल था। यह बुद्व के अवधि के दौरान 16 महाजनपदों में एक था, जो वर्त्तमान में कानपुर से वाराणसी के गंगा के मैदानी भागों में फैला हुआ है। इसकी दो शाखाएँ – उत्तर पंचाल जिसकी राजधानी 'अहिक्षत्र' और दक्षिणी पंचाल जिसकी राजधानी काम्पिल्य थी। पंचाल जनपद को प्राचीन काल में संभवतः क्रिवि जनपद के नाम से जाना जाता था इसका उल्लेख शतपथ ब्राह्मण (13/5/4/9) में भी आया है (कृक्यइति पुरो पंचालानाचझते) । तत्पश्चात् ''पंचाल नामकरण किन परिस्थितियों में किस व्यक्ति विशेष ने किया, इसका स्पष्ट तथ्यात्मक प्रमाण नहीं मिलता। पाणिनी की अष्टाध्यायी (4/7/763) में पंचाल के स्थान पर प्रत्यग्रंथ का उल्लेख है। गंगा एवं रामगंगा के बीच प्रत्यग्रंथ जनपद स्थित था, जिसे पंचाल भी कहा गया है। [1] पतंजलि ने अपने महाकाल में एक जनपद के रूप में पंचाल का उल्लेख किया है। [2] मध्यकालिन शब्दकोशों के अनुसार पंचाल का ही दूसरा नाम प्रत्यग्रंथ था, जिसकी राजधानी अहिच्छत्र थी।

कुछ विद्वानों, जैसे मैक्डानल व कीध का मत है कि ऋग्वेद में उल्लेखित पचजनाः पंचक्षियतः और पंचकृष्टयः आदि शब्दों में पाँच जन समुदायों (यदु, तुर्वशु , अनु , द्तुहय और पुरू) का बोध होता है। उन्हें मिलाकर एक राज्य की स्थापना की, जिसे पंचाल के नाम से जाना जाता है। आर0 सी0 मजूमदार व राय चौधरी जैसे कुछ विद्वानों का मत है कि यह राज्य क्रिवि, तुर्वश, केशिन, सृंजय व सोमक इन पाँच जन–समुदायों को मिलने से बना था। निरूक्तकार आचार्य औपमन्यव ने पंचजना का अर्थ ब्राहम्ण, क्षत्रीय, वैश्य, शुद्र व निषाद से किया है। वही निरूक्तकार आचार्य, यास्कमुनि गंधर्व, पितर, देवता, असुर और राक्षस, इन पाँच प्रकार के मानव शरीरधारी प्रणियों को पंचजना के रूप में जानते है। ऐतरेय ब्रहमण में यह देवता, मनुष्य , गंधर्व, सपं और पितृगण को माना गया है। कुछ विद्वान पाँच प्रकार के गुण–कर्म–स्वभाव वाले मनुष्यों को ही 'पंचजना' के रूप में देखते है। पुराणों में भी यह राज्य का उल्लेख कई बार, कई रूपों में आया है। [3] इनके अनुसार राजा भृम्यश्व के पाँच पुत्रों ने जिस प्रदेश की रक्षा की वह प्रदेश पंचाल कहलाया। पुराणों से मिलती–जुलती बौद्व ग्रंथ चेतिय जातक में लिखा है, इसके अनुसार चेदिराज के पाँच पुत्र थे। सभी पुत्रों ने राज्यमंत्री कपिल के परामर्श से पृथक राज्य की स्थापना की। उत्तर दिशा में बसाया गया राज्य उत्तर पंचाल के नाम से प्रसिद्व हुआ।

भौगोलिक विस्तार :–

पंचाल क्षेत्र का भौगोलिक विस्तार समय–समय पर घटता–बढ़ता रहा है, अतः इसके किसी निश्चित सीमा स्वरूप की जानकारी नहीं मिल पाती। महाभारत में उल्लिखित पंचाल राज्य की सीमाएँ सर्वाधिक

विस्तृत थी। उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में चंबल (चर्मणवती नदी) तक का भू–भाग पंचाल क्षेत्र के रूप में जाना जाता था। एरियन, जिसने पंचाल को पाजाइआज कहा है, के यात्रा वृतांत के जिले, दक्षिण में कुरू और शूरसेन जनपदों से दक्षिण–पूर्व का तथा गंगा–युमना के बीच का पूर्वि प्रदेश सम्मिलित था। डॉ0 कैलाशनाथ द्विवेदी के अनुसार इसका विस्तार दक्षिण के चर्मण्वती (चंबल) नदी से उत्तर में हिमालय तक तथा पश्चिम में कुरू राज्य की सीमा से कोसल राज्य की सीमा तक निर्धारित किया है।

जलवायु :–

किसी भी प्रवेश के भौगोलिक अध्ययन में जलवायु अति महत्वपूर्ण कारक होता है। जलवायु से न केवल मानवीय क्रिया कलाप [4] अपितु प्राकृतिक वनस्पति, जीवजंतु आदि भौतिक रूप में प्रभावित होते है। क्योंकि सभी भौगोलिक प्रभावों में जलवायु ही सर्वाधिक शक्तिशाली होती है, जिससे मानव प्रभावित होता है। जलवायु के प्रमुख पाँच तत्वों वायुमण्डल का ताप, शौर्यशक्ति, वायुभार, पवन, आर्द्रता तथा वर्षण को निर्धारित करते हुए जी0 टी0 ट्रिवांर्था ने वायुमण्डल के सबसे नीचे स्तर टायोस्फीयर में जलवायु के परिवर्त्तनों को स्वीकार किया है। [5] इस आधार पर पंचाल की जलवायु सुखद एवं महत्वपूर्ण कही जा सकती है।

किंतु इस स्थल के स्वरूप और सीमाओं में परिवर्त्तन हो जाने से जलवायु भी परिवर्तित हो गई, साथ में जाड़ों व गर्मियों के तापमान में भी अब बहुत अंतर होता था। जो विषय जलवायु का ही रूप था। मानसूनी अनुकूल जलवायु में पर्याप्त वार्षिक वृष्टि से खेतों की मेड़ों या बांध टूट जाते थे। इस पर्याप्त वृष्टि से पंचाल प्राकृतिक वनस्पति में अत्यंत समृद्ध था। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी इस क्षेत्र की जलवायु को सुखद बताया है। [6] वह कन्नौज के बारे में कहता है कि यहां के निवासी समृद्ध एवं परिवार खुशहाल है। फल और फूल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है और मौसम के अनुसार फसलें बोयी और पकती थी [7] अल्बेरूनी ने इस भूभाग का वर्णन करते हुए लिखा है कि यह गर्म और ठण्डे देशों के बीच में स्थित है। [8]

कृषि उपज :–

प्राचीन पंचाल जनपद का मैदानी भाग गंगा–युमना आदि नदियों से सिंचित होने एवं अनुकूल जलवायु के कारण अत्यंत ही उपजाऊ था। डॉ0 ए0 सी0 दास भी इसे निचला मैदान कहते हुए उपजाऊ बतलाते है। [9] प्रायः इस क्षेत्र में खरीफ रबी और जायद नाम से वितरित सभी फसलें उगाई जाती थी। जिसमें जौ, चावल, बाजरा, कपास, ईख (गन्ना), अरहर, उदड़, मूँग, ज्वार, मक्का, तम्बाकू आदि प्रमुख है।

नदियाँ :–

समस्त पंचाल प्रदेश पर नदियों का व्यापक भौगोलिक, राजनीतिक, समाजिक प्रभाव पड़ता है। एक तरफ गंगा उत्तर पंचाल तथा दक्षिण पंचाल का सीमा निर्धारित करती है। वही कुछ नदियाँ जनपद का बाहरी सीमा निर्धारित करती है। जो शत्रु आक्रमण से जनपद की रक्षा करती थी। इन नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी के निरंतर जमाव से यह क्षेत्र एक उर्वरक मैदान बन रहा है, जलवायु सुखद रहा है। कृषि, पशुपालन तथा अन्य उद्योग धंधे पनपते रहे। अधिकांश आबादी इन्ही नदियों के इर्द–गिर्द बसे थे। पंचाल जनपद में मुख्यतः गंगा–यमुना प्रवाह तंत्र की नदियों पायी जाती थी, गंगा पंचाल जनपद से गुजरने वाली नदियों में सबसे प्रमुख नदी थी। यह हिमालय श्रेणियों से निकलकर थोड़ी दुर प्रवाहित होकर, वर्त्तमान हस्तिनापुर के समीप पूर्वी समुद्र (आरावत) में गिरती थी। [10] महाभारत महाकाव्य के

अनुसार, यह उत्तर पंचाल तथा दक्षिण पंचाल की सीमा का निर्धारित करती थी। यह हरिद्वार से वेग पूर्व प्रवाह के साथ गंगा दक्षिण, फिर दक्षिण पूर्व की ओर बहती हुई कन्नौज के निकट रामगंगा में मिल जाती थी। फिर यह दक्षिण की तरफ बहती हुई यमुना में मिल जाती थी।

इसके अलावे चर्मणवती (चंबल) रामगंगा, काली (इंसुमती), ईशनस्वि (अंकिरद), पाण्डु, नोन आदि सहायक नदियाँ भी थी जो पंचाल जनपद के संस्कृति के अंग थे।

प्रमुख नगर एवं ग्राम :–

प्राचीन काल में पंचाल कैव्य देश के रूप में जाना जाता था। कहा जाता है कि त्रेतायुग के अंत में राजा भृम्यश्व के पाँच पुत्रों के आधार पर इसका नाम बदलकर पंचाल प्रदेश रख दिया था। हमें कैव्य देश के किसी नगर साहित्यिक प्रमाण नहीं मिल सका है। इसका नाम पंचाल हो जाने के काफी समय बाद ही हमें कई नगरों व गांवो के स्पष्ट प्रमाण मिल पाते है। इनमें से प्रमुख नगर व गांवों का उल्लेख किया जा रहा है।

कांपिल्य :–

इस नगर की पहचान फर्रूखाबाद जनपद के अंतर्गत गंगा नदी के किनारे बसे स्थान काम्पिल से की जाती है जो आजकल यह एक खंडहर के रूप में भूमि में दवा पड़ा है। ज्ञातव्य हो कि राजा मृम्यश्व के एक पुत्र कांपिल्य के नाम पर ही इस स्थान का नाम भी कांपिल्य पड़ा। विद्वानों ने इसे भारत के महत्वपूर्ण नगरों में से एक माना है। इसे पंचाल की राजधानी होने का भी गौरव प्राप्त हुआ। साहित्यिक रचनाओं में विभिन्न रूपों में इसकी कई बार चर्चा हुई है। वैदिक साहित्य में ''काम्पील वासिनी'' का देवी के विशेषण के रूप में प्रयोग किया गया है। बाल्मीकि रामायण में कांपिल्य नगर और उसके शासक ब्रह्मदत्त का वर्णन मिलता है। [11] ब्रह्मदत्त जातक में इसे ''कम्पिलरह'' या काम्पिल्य राष्ट्र कहा गया है। रामायण में इसे इन्द्रलोक की तरह सुन्दर बताया गया है। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इसका नाम कपीय बतलाया।

बौद्ध तथा जैन साहित्य में भी इस नगर का विवरण मिलता है। जातकों से ज्ञात होता है कि नगर से नदी तक राजपुरूषों तथा स्त्रियों के जाने के लिए एक कलात्मक सुरंग खोदी गई थी तथा इसे कलात्मक रूप से सजाया गया था। आवश्यक नियुक्ति में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि यही स्थान जैनियों के 13वें तीर्थकारों श्रीविमल नाथु की जन्मस्थली है। यहीं उनके जीवन की पाँच पवित्र घटनाएँ, अवतरण, उत्पत्ति, राज्याभिषेक, दीक्षा, तथा जैनत्व यही घटित हुई थी। इसी कारण यह स्थान पंचक कल्याणक नाम से भी प्रसिद्ध हुआ। युवा सगइदसाक में यहाँ भगवान महावीर के आने की चर्चा की गई है। [12] ऐसी मान्यता है कि द्रुपद की पुत्री द्रोपदी का स्वंयवर कांपिल्य में ही हुआ था। यह नगर के उत्तर–पश्चिम में एक बड़ा सा 8–10 मी0 ऊँचा टीला है, जिसे स्थानीय लोग 'द्रुपद' टीला के रूप में जानते है।

सांकाश्य (संकिसा)

सांकाश्य प्राचीन पंचाल जनपद के गौरवशाली नगरों में से एक था। इसके ध्वंसावशेष फर्रूखाबाद जिले में बसंतपुर नामक एक छोटे से गांव के पास बिखरा हुआ मिलता है। यह गांव एटा तथा मैनपुरी जिलों की सीमा पर स्थित है। प्राचीन कांपिल्य नगर से इसकी स्थिति 30 मील दक्षिण की तरफ तथा फर्रूखाबाद के पखना स्टेशन से 9 मील दक्षिण पश्चिम की तरफ है। प्राचीन काल में यह नगर कान्यु–कुब्ज तथा अविरंजी नगरों के बीच में पड़ता था। पतंजलि के महाभाष्य में उल्लेख है। [13]

भवीधुभतः सांकाश्यं चत्वारि योघनाति।

अर्थात गवीधुमान् नगर से सांकाश्य चार भोजन (40 किलोमीटर) है। गोविधुमान की बाद में कुदरकोर के रूप में पहचान की गई। ह्वेनसांग ने सन् 636 ई0 में पोलोभन (संभवतः अतिरंधोखेड़ा) में सांकाश्य पहुँचा था। उसने रस नगर का नाम कोपिय कपित्य बताया, जो कम्पिल के लिए प्रयुक्त किया जाना अधिक समीपीन लगता है। उसने इसे सेंगकियसे नाम से भी पुकारा है। इसके समीप काली नदी बहती है। इसका प्राचीन नाम इक्षुमती (ईखवाली) नदी था। नदी का यह नाम आज भी सार्थक है, क्योंकि यहाँ की उपजाऊ भूमि में ईख की अच्छी पैदावार होती थी। ज्ञातव्य हो सांकाश्य का उल्लेख कई साहित्यिक ग्रंथों में मिलता है। रामायण (आदि काण्ड) में सीरध्वज जनक के भाई कुशध्वज दुबारा इस स्थान पर शासन करने का उल्लेख है। बौद्ध ग्रंथों में भी इसकी कई बार चर्चा हुई है। महीधर बृहज्जातक की टीका में काम्पिल्य के एक मुहल्ले का नाम कपिल्यंक लिखा है कहा जाता है कि भगवान बुद्ध, ब्रहमा तथा इंद्र के साथ इसी स्थान पर त्रेयर्धिसृंश स्वर्ग से सीढ़ी द्वारा उतरे थे। यह स्थान संकिसा गांव के पास टीले पर स्थित बिसहरी देवी के मंदीर के समीप माना जाता है। इसी के पास अशोक के स्तंभ का शीर्ष भाग पड़ा हुआ है। इस पर हाथी बनी हुई है जिसकी सूढ़ टूट गई है। शीर्ष पर लगी पालिश दीदरगंज कीी यक्षिणी की तरह चकमदार है। [14] संकिसा गांव के पूरब की तरफ 1 किलोमीटर की दुरी पर चौखण्डी है। चौखण्डी से थोड़ी दूर स्थित भूमि को गांव पाथ पंथावाली कहते है। यहाँ से दक्षिण की तरफ स्थित बीबी का कोर्ट के बारे में कनिघंम का मत है कि यहाँ पहले बौद्ध रहा होगा। वर्त्तमान में यह स्थान साढ़े पांच किलोमीटर की एक मिट्टी की चहारदीवारी सी प्रतीत होती है। इसके आलवे सांकिसा गांव से ही एक महत्वपूर्ण पक्की ईट प्राप्त हुई है। इस ईट पर छठी शताब्दी ई0 पू0 का ब्राहमी लिपि में प्राकृत भाषा का लेख है। यहाँ मिले इन सभी साक्ष्यों का विश्लेषण कर कहा जा सकता है कि मौर्यकाल से लेकर गुप्तकाल के अंतिम समय तक यहाँ स्थापत्व तथा मूर्तिकला का विकास होता रहा।

कान्यकुब्ज (कन्नौज) :–

कान्यकुब्ज वर्त्तमान में कन्नौज के नाम से जाना जाता है। यह फतेहगढ़ से 53 किमी दक्षिण पूर्व तथा कानपुर से 70 किमी उत्तर–पश्चिम में पड़ता है प्राचीन साहित्य में इसकी कई बार उल्लेख मिलता है। गाधि के नाम पर यह स्थान गाधिपुरी कहलायी। विश्वामित्र गाधि के ही पुत्र थे। वाराहपुरण में इसका उल्लेख 'महागृहोदय' के नाम से हुआ है। बौद्ध ग्रंथ महावस्तु में कन्यकुंब्ध तथा कनकुब्ज विनय पिटक में कण्णुकुब्ज तथा दीपवंश, महावंश एवं वंसत्यपकासिनी में कण्णगोच्छा तथा कण्णगोट्टा नाम बताये गये है। ग्रीक लखेक टॉलेमी ने भी इस नगर को कनगोजा या कनोगिजा के रूप में उल्लेख किया है। यहाँ मौर्य से लेकर गुप्तों के शासन तक प्रमाण मिलता है। एवं विभिन्न संस्कृतियों का उत्थान एवं पतन पुरावशेषों से पता चलता है।

इसके अलावे यहाँ प्रमुख नगरों एवं गांवों में ब्रह्मवर्त्त, बिलसड़, अतरंजीखेड़ा, जनरक्त (जनक क्षेत्र), कहजरा (कटिंजय), नोहखेड़ा (नोहवा), अहिच्छत्रा, उज्झाम, भीतरगांव, पिपरगांव, रहटोइया, जाजमाऊ, गुमंथल कुदरकोट, शाहबाद, आशानगरी (आसई) बिसौली, मदारपुर, माकन्दी, मूँज, बिसौली, इटावा, आलवी, मूसानगर, भंरहे, काशीपुर [15] इत्यादि महत्वपूर्ण गांव एवं शहर थे। यहाँ के ध्वंसावशेषों से विष्णु, शिव, सूर्य, गणेश, दुर्गा, महिषासुरमर्दिनी (दुर्गा), बुद्ध आदि की कई प्रतिमाएँ भी मिली है। यहाँ से प्राप्त कसौरी पत्थर से निर्मित एक विष्णु की प्रतिमा बहुत लोकप्रिय है। यह यहीं के एक मंदीर में स्थापित है। यहाँ के मिले इतने सारे साहित्यिक तथा पुरातात्विक प्रमाण इस स्थान की प्राचीनता तथा उसके राजनैतिक सांस्कृतिक आर्थिक तथा धार्मिक महत्व के विविधता को प्रकाशित करते है।

प्रमुख धर्म तीर्थ स्थल :–

भरद्वाज आश्रम :– रामायण कालिन गंगा युमना संगम स्थल से सुदूर कुरू राज्य के उत्तर–पूर्व में उत्तरी पश्चिमी पंचाल राज्य सीमा में गंगाद्वार के समीप तट पर महर्षि भारद्वाज का पावन आश्रम अवस्थित था। जहाँ विविध शासकों के साथ आयुध्यशास्त्र की भी शिक्षा दी जाती थी। [16]

धौम्याश्रम :– उपनिषिदों में उल्लिखित उद्धालक आरूणेय के गुरू महर्षि धौम्य का आश्रम गंगा के तट पर से काम्पिल्य से थोड़ी दूर अवस्थित था। इसी आश्रम से आत्य ज्ञान पाकर शास्त्रार्थ हेतु आरूणेय पंचालों की प्रबुद्ध परिषद में पहुँचा था।

अश्वतीर्थ :– यह भी गंगा के किनारे ही अवस्थित था। कुछ विद्वान कन्नौज को ही अश्वतीर्थ मानते है। कहा जाता है कि अश्वतीर्थ में ही महर्षि ऋच्योक ने महाभारत गाधि की कन्या से विवाह किया था। और महाराजा गाधी ने सहस्र श्यामवर्ण के घोड़े की मांग की थी। जो महर्षि ने वरूण देव से कहकर उसे यहीं प्रकट कर दिये थे।

बाल्मीकि आश्रम :– यद्यपि बाल्मीकि आश्रम के बारे में पर्याप्त मतभेद है किंतु सर्वमान्य मत बिठूर (प्राचीन ब्रह्मावर्त या उत्पालारण्य तीर्थ) के विषय में ही है रामायण में उल्लिखित है कि यहाँ नजदीक गंगा के किनारे बाल्मीकि आश्रम स्थित था [17] इसके अलावे उत्कोंचक तीर्थ रोमाश्रयांयण शरदवीप रूद्रायण तीर्थ प्रमुख थे जो ज्ञान–विज्ञान अलावे धार्मिक संस्कृति के भी महत्वपूर्ण केन्द्र के रूप में स्थापित थे।

उपसंहार :–

प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राचीन पंचाल जनपद की भौगोलिक पृष्ठ भूमि का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के अध्ययन में करने के साथ–साथ पंचाल की समतल उपजाऊ भू–आकृति, सदानिरा गंगा, यमुना, रक्षुमती चम्बल इत्यादि नदियों के अनुकूल मंद प्रवाह एवं सुरम्य अनुकूल जलवायु ने यहाँ ऐसी परिस्थितियों का निर्माण किया, जिसने पंचाल की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक उन्नति के साथ ही उसके सांस्कृतिक, दार्शनिक, उत्कर्ष को अभूतपूर्व योगदान दिया। फलतः तत्कालिन सोलह महाजनपदों में पंचाल न केवल अपने अस्तित्व को बनाये रखने में सफल रहा वरन उसने धर्म, दर्शन, कला, साहित्य आदि विविध क्षेत्रों में अपना वर्चस्व भी स्थापित किया। वैदिकयुग से लेकर पूर्व मध्य काल तक अहिच्छत्रा काम्पिल्य संकाश्य, कान्य कुब्ध आदि नगरों ने प्रत्येक क्षेत्र में अभूतपूर्व उन्नति की और कन्नौज को तो उत्तर भारत की राजधानी बनने का भी अवसर प्राप्त हुआ। इस प्रकार आर्यो का धर्म, दर्शन, ज्ञान–विज्ञान ललित कलाओं, अमोद–प्रमोद, शिक्षा–स्वस्थ सामान्य रीति–रिवाज आदि का प्रभूत विकास करके विश्व संस्कृतियों में मूर्धन्य एवं महिमामय जीवन्त स्थान प्राप्त किया।

संदर्भ सूचि :–

1. अग्रवाल वासुदेवशरण–पाणिनि कालिन भारत, नई दिल्ली पृ0 – 74
2. पंतजलि, महाभाष्य, गीता प्रेस गोरखपुर, (1/212 पृ0 – 512, 1/1/1 पृ0 – 37)
3. मत्स्य पुराण 50/40, विष्णु पुराण – 4/19/59 तस्मान्मुद्ल सृंजय वृहदिषुयवीनर काम्पिलयः
4. डॉ0 एस0 डी0 कौशिक, इन्वायरनमेण्ट एण्ड हयूमैन प्रोग्रेस, 1966 चैप्टर – 5
5. टिवार्था जी0 टी0, ऐन इन्ट्रोडक्शन टु क्लाइमेट 1954, पृ0 – 28
6. Thomes Watters, on Yuam Chuwang's travels in India, Volume – 1, P. 331-333
7. Ibid Vol -1 P. 340

8. E.c Sachau, Alberumi's S. India, Val-1, P. 198, HIED, Vol – 1, P . 54
9. Das, A.C , Rgvedie India, Part – 1 P. – 70
10. भागर्व, एम, एल, द ज्योग्राफी ऑफ ऋग्वैदिक इण्डिया, लखनऊ, 1976, पृ0 – 41
11. बाल्मीकि रामायण, भुजराही प्रिंटिग प्रेस, बम्बई, आदिकाण्ड, अध्याय – 70
12. श्रीवास्तव के सी प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपों, इलाहाबाद, 2008–09, पृ0 – 125
13. Opcit – (2) पृ0 – 75
14. द्विवेदी, कांपिल देव पंचाल का इतिहास एवं संस्कृति, परिथल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1995, पृ0 – 29
15. I bid – 14 पृ0 – 27 – 38 तक
16. व्यास, शांतिकुमार नानूराम, रामायणकालीन समाज सस्तां साहित्य मण्डल प्रकाशन, दिल्ली, 2018 पृ0 – 109
17. रामायण उत्तरकाण्ड 47/15 दृष्टव्य, बाजपेयी कृष्णदत्त, प्राचीन भारत में तपोवनः नागिटी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष 1953, सं0 – 3-4